माननीय एम.एम. कुमार और रितु बाहरी, जे जे, से पहले।

आर.एल. जाखू,-याचिकाकर्ता

बनाम

भारत संघ और अन्य,-प्रतिवादी

सी.डब्ल्यू.पी. क्रमांक 14785/ सी ए टी 2003

15 दिसंबर 2010

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद। 220—केंद्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1965—नियम 14, 15(2)—जांच अधिकारी द्वारा याचिकाकर्ता को सभी आरोपों से मुक्त करना– अनुशासनात्मक प्राधिकारी जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों से असहमत होना और असहमति नोट के रूप में संचार जारी करना– याचिकाकर्ता अभ्यावेदन प्रस्तुत कर रहा है - प्रतिवादी असहमति नोट के आधार पर और यूपीएससी द्वारा दी गई सलाह को ध्यान में रखते हुए दंड आदेश पारित कर रहे हैं - नियम 15 (2) के प्रावधानों के अनुसार अनुशासनात्मक प्राधिकारी को, पूछताछ प्राधिकारी के निष्कर्ष से असहमति के मामले में, असहमति के कारणों को रिकॉर्ड करने की आवश्यकता होती है। और फिर ऐसे आरोप पर अपने स्वयं के निष्कर्षों को रिकॉर्ड करने के लिए यदि रिकॉर्ड पर सबूत इस उद्देश्य के लिए 'पर्याप्त' है - अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा दिमाग का पूर्ण गैर-प्रयोग - आरोपों को बनाए रखने के लिए न तो किसी सबूत पर चर्चा की गई और न ही इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कोई तर्क अपनाया गया है कि याचिकाकर्ता उन आरोपों का दोषी है - याचिका स्वीकार की गई, ट्रिब्यूनल और अनुशासनात्मक प्राधिकरण के आदेशों ने याचिकाकर्ता को सभी परिणामी लाभों का हकदार मानते हुए रद्द कर दिया।

माना गया कि मौजूदा मामला अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पूरी तरह से विवेक का प्रयोग न करने की निराशाजनक तस्वीर पेश करता है। आरोपों को कायम रखने के लिए वस्तुतः कोई सबूत पर चर्चा नहीं की गई है और न ही इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कोई तर्क अपनाया गया है कि याचिकाकर्ता उन आरोपों का दोषी है। सुनवाई में, उत्तरदाताओं ने नियमों के नियम 15(4) के अनुसरण में अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा संघ लोक सेवा आयोग को दी गई सलाह का समर्थन किया है और उस आधार पर, प्रस्तुतियाँ दी गई हैं कि इसे बनाए रखने के लिए पर्याप्त सबूत हैं। अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा निष्कर्ष दर्ज किया गया।

नियमों के नियम 15(2) का अनुपालन किया गया है या नहीं, यह पता लगाने के कानूनी मुद्दे पर खुद को वोट देने के बजाय, ट्रिब्यूनल ने खुद को सामान्य प्रकृति के अप्रासंगिक मुद्दे पर गलत दिशा में निर्देशित किया है, अर्थात्, यह अपील का न्यायालय नहीं बन सकता है और सबूतों की दोबारा सराहना करने में असमर्थ था। ट्रिब्यूनल पूर्वाग्रह के परीक्षण का हवाला देने के एक अन्य मुद्दे पर भी निर्भर है जो इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में बिल्कुल भी प्रासंगिक नहीं था। विचार के लिए एकमात्र मुद्दा यह था कि क्या नियम 15 के उप-नियम (2) के प्रावधानों का अनुपालन किया गया था या नहीं। उपरोक्त मुद्दे को छुआ गया है जबकि अन्य मुद्दों पर काफी समय दिया गया है, इसलिए, हम ट्रिब्यूनल द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को स्वीकार करने में असमर्थ हैं।

(पैरा 11)

इसके अलावा, यह माना गया कि वैधानिक नियम, सिद्धांत और मिसाल पर कोई संदेह नहीं बचा है कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी को जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होने से पहले आरोपों को बनाए रखने के लिए सबूतों की पर्याप्तता को देखने के बाद कारण दर्ज करना चाहिए था। 2 अगस्त, 2000 को अनुशासनात्मक प्राधिकारी

द्वारा दर्ज किया गया असहमति नोट नियमों की आवश्यक आवश्यकता को पूरा करने से बहुत दूर है। इसलिए, असहमति नोट के साथ-साथ उस पर आधारित बाद की कार्यवाही को रद्द किया जा सकता है।

(पैरा 15)

आर.एन. रैना और दमन धीर, याचिकाकर्ता के लिए वकील।

प्रतिवादियों की ओर से बृजेश्वर सिंह, अधिवक्ता।

एम.एम. कुमार, जे.

(1) संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत असफल मूल आवेदक द्वारा दायर तत्काल याचिका, केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, चंडीगढ़ बेंच, चंडीगढ़ द्वारा पारित आदेश, दिनांक 12 मई, 2003 (अनुलग्नक पी -1) के खिलाफ निर्देशित है (संक्षिप्तता के लिए) ट्रिब्यूनल'). ट्रिब्यूनल ने सजा के आदेश, दिनांक 22 मार्च, 2002 (अनुलग्नक पी-2) को बरकरार रखा है, जिसमें याचिकाकर्ता को उसके वर्तमान वेतनमान में तीन चरणों में तीन साल की अवधि के लिए वेतन में कटौती की सजा दी गई है, साथ ही यह भी निर्देश दिया गया है कि याचिकाकर्ता उक्त अवधि के दौरान वेतन वृद्धि अर्जित नहीं करेगा और उक्त अवधि की समाप्ति पर कटौती का प्रभाव उसकी भविष्य की वेतन वृद्धि को स्थगित करना था।

(2) संक्षेप में तथ्यों पर ध्यान दिया जाए ताकि विवाद को कानूनी खांचे में डाला जा सके। याचिकाकर्ता को संघ लोक सेवा आयोग (संक्षिप्तता के लिए 'यूपीएससी') द्वारा चुना गया था और 24 अगस्त, 1987 को सहायक मुख्य लेखा अधिकारी के पद पर समूह 'ए' अधिकारी के रूप में तैनात किया गया था। उन्हें मुख्य लेखा अधिकारी/आईएफए के रूप में पदोन्नत किया गया था। वर्ष 1991 में और 20 नवंबर, 1991 से 15 सितंबर, 1993 तक दूरसंचार जिला प्रबंधक, हिसार के कार्यालय में तैनात रहे। उन्हें आगे निदेशक (एफ एंड ए)/आईएफए के रूप में पदोन्नत किया गया और उन्हें लुधियाना स्थानांतरित कर दिया गया।

(3) 19 फरवरी, 1996 को, केंद्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1965 (संक्षिप्तता के लिए, 'नियम') के नियम 14 के तहत उन्हें एक चार्ज मेमो (अनुलग्नक पी-3) अनुशासनात्मक प्राधिकारी, अर्थात्, प्रतिवादी संख्या 2 और 3 के माध्यम से दिया गया था। याचिकाकर्ता पर 20 नवंबर, 1991 से 15 नवंबर, 1993 की अवधि से संबंधित पांच आरोप लगाए गए थे, जब वह दूरसंचार जिला प्रबंधक, हिसार के कार्यालय में मुख्य लेखा अधिकारी-सह-वित्त अधिकारी के रूप में तैनात था। 12 मार्च, 1996 को उन्होंने अपने ऊपर लगाए गए सभी आरोपों को दृढ़तापूर्वक नकारते हुए अपना जवाब (अनुलग्नक पी-4) प्रस्तुत किया। उन्होंने व्यक्तिगत रूप से सुने जाने की इच्छा भी व्यक्त की। विभागीय जांच हुई और जांच अधिकारी ने अपनी जांच रिपोर्ट, दिनांक 28 जुलाई, 1999 (अनुलग्नक पी-6) के माध्यम से यह माना कि दिनांक 19 फरवरी, 1996 (अनुलग्नक पी-3) के आरोप ज्ञापन के माध्यम से याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए पांच आरोपों में से कोई भी लगाया आरोप नहीं साबित हुआ. तदनुसार, जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता को सभी आरोपों से मुक्त कर दिया। हालाँकि, 2 अगस्त, 2000 को, अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने याचिकाकर्ता को एक संचार दिया जिसे 'असहमति नोट' (अनुलग्नक पी -7) कहा गया और जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों से अपनी असहमति व्यक्त की। याचिकाकर्ता को उक्त संचार के खिलाफ प्रतिनिधित्व करने के लिए बुलाया गया था। असहमति नोट बताए जाने वाले संचार को पढ़ना दिलचस्प होगा (अनुलग्नक पी-7) :—

"श्री के.के. द्वारा प्रस्तुत जांच रिपोर्ट की एक प्रति।" कुलश्रेष्ठ, एडीजी (डीआई), डीओटी, नई दिल्ली को श्री आर.एल. जाखू, पूर्व सीएओ, कार्यालय टीडीएम, हिसार और अब निदेशक (वित्त), कार्यालय जीएमटीडी, लुधियाना के खिलाफ लगाए गए आरोपों की जांच करने के लिए जांच प्राधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया था। इसके साथ अग्रेषित किया गया है, अनुशासनात्मक प्राधिकारी निम्नलिखित सीमा तक पूछताछ प्राधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होने का प्रस्ताव करता है: -

(1) यह कि आरोपित अधिकारी मेसर्स बी.आर. पर खरीद आदेश देने की सिफारिश करते समय अनियमितताओं को इंगित करने में विफल रहा। इलेक्ट्रिकल्स, नई दिल्ली, 625 किलोमीटर पीवीसी इंसुलेटेड 2 मिमी व्यास वाले गैल्वनाइज्ड स्टील ट्विन ड्रॉप वायर की आपूर्ति के लिए जम्मू-कश्मीर सर्कल द्वारा अनुमोदित दरों पर रु 46,80,575 की भारी मात्रा में खरीद के मद्देनजर नियमों के तहत कोई निविदा आमंत्रित नहीं की गई थी।

(ii) 100 पाउंड ड्रॉप वायर की स्थानीय खरीद करने से पहले सर्कल स्टोर डिपो, अंबाला से अनुपलब्धता प्रमाण पत्र प्राप्त नहीं किया गया था।

(iii) खरीद के लिए टीडीएम की वित्तीय शक्तियां रुपये तक सीमित थीं। पीएसयू के अलावा अन्य स्रोतों से प्रत्येक अवसर पर 2 लाख।

(iv) नियम 104 जीएफआर, 1963 के उल्लंघन में ऑर्डर की कुल राशि के संदर्भ में आवश्यक सक्षम प्राधिकारी की मंजूरी प्राप्त करने की आवश्यकता से बचने के लिए खरीद आदेशों को विभाजित किया गया था।

(v) वह टीएमडी, हिसार को 50 रुपये की कुल लागत पर बिना निविदाएं आमंत्रित किए मेसर्स तायल टेलिसिटेम से 2,03,364 रु. के पोर्टेबल लाइन टेस्टर की स्थानीय खरीद की सिफारिश कर रहा है।

(vi) वह वित्तीय मामलों में टीडीएम को सही सलाह देने में विफल रहे।

2. श्री आर.एल. जाखू को उपरोक्तानुसार, जांच प्राधिकारी के निष्कर्षों के साथ प्रस्तावित असहमति के आलोक में जांच प्राधिकारी के निष्कर्षों के खिलाफ ऐसा अभ्यावेदन देने का अवसर दिया गया है, लेकिन केवल आधार पर पूछताछ के दौरान सामने आए साक्ष्य ऐसा अभ्यावेदन, यदि कोई हो, इस ज्ञापन की प्राप्ति की तारीख से 15 दिनों के भीतर इस कार्यालय को लिखित रूप में प्रस्तुत किया जाएगा, ऐसा न करने पर यह माना जाएगा कि उसके पास देने के लिए कोई अभ्यावेदन नहीं है और उसके खिलाफ आगे की कार्यवाही रोकी जा सकती है। अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पार्ट.

3. इस ज्ञापन की प्राप्ति की सूचना श्री आर.एल. जाखू, निदेशक (वित्त) द्वारा दी जाएगी।

आदेश से और राष्ट्रपति के नाम पर।"

(4) याचिकाकर्ता ने 25 अगस्त, 2000 को उपरोक्त असहमति नोट पर अपना जवाब प्रस्तुत किया (अनुलग्नक पी-8)। हालाँकि, उत्तरदाताओं ने 'असहमति नोट' के आधार पर और यूपीएससी द्वारा 3 अगस्त, 2001 को दी गई सलाह को ध्यान में रखते हुए 'दंड आदेश दिनांक 22 मार्च, 2002 (अनुलग्नक पी-2) पारित किया है। 9).

(5) व्यथित महसूस करते हुए, याचिकाकर्ता ने ट्रिब्यूनल से संपर्क किया और 2002 की मूल आवेदन संख्या 425-पीबी (अनुलग्नक पी-1) दायर करके 22 मार्च, 2002 (अनुलग्नक पी-2) के आदेश को रद्द करने की प्रार्थना के साथ चुनौती दी। वही। याचिकाकर्ता ने निदेशक (वित्तीय) के रूप में अपनी नियमित पदोन्नति के संबंध में सभी परिणामी लाभ देने के लिए उत्तरदाताओं को निर्देश देने की भी मांग की। याचिकाकर्ता 23 फरवरी, 2002 के आदेश को रद्द करने के लिए अपनी दलीलों से सहमत होने के लिए ट्रिब्यूनल को मनाने में विफल रहा। पंजाब नेशनल बैंक और अन्य बनाम कुंज बिहारी मिश्रा ([1]) के मामले में फैसले पर याचिकाकर्ता की निर्भरता, नहीं मिली ट्रिब्यूनल से अनुकूल प्रतिक्रिया. वास्तव में, ट्रिब्यूनल को माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले का हवाला देते हुए उनकी प्रार्थना को अस्वीकार करने के लिए राजी किया गया था, जिसमें कहा गया था कि यदि कुछ औपचारिकताओं या कानूनी आवश्यकताओं का पालन नहीं किया गया है, तो पूर्वाग्रह के परीक्षण को एक कर्मचारी द्वारा संतुष्ट किया जाना आवश्यक है। विभागीय कार्यवाही को चुनौती देने के लिए ट्रिब्यूनल का दरवाजा खटखटाया है। हालाँकि ट्रिब्यूनल ने उपरोक्त दृष्टिकोण को ध्यान में रखते

1. (1998)7S.C.C. 84

हुए किसी भी निर्णय का हवाला नहीं दिया है, लेकिन एक दोषी कर्मचारी को जांच रिपोर्ट प्रस्तुत न करने के उद्देश्य से संदर्भ दिया गया है ताकि विभागीय कार्यवाही को ख़राब किया जा सके जो कि ट्रिब्यूनल की राय में पुराना कानून था। ट्रिब्यूनल ने ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम एस बालाकृष्णन ([2]) के मामले में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया है, ताकि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि गैर-कानूनी कारणों से दोषी कर्मचारी पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है। जांच रिपोर्ट को खारिज कर दिया जाए, तो अनुशासनात्मक कार्यवाही को प्रभावित नहीं किया जाएगा। ट्रिब्यूनल ने आगे निर्दिष्ट किया है कि इसका अधिकार क्षेत्र सीमित है और यह विभागीय जांच के मामले में अपने स्वयं के निष्कर्षों को दर्ज करके अपील की अदालत नहीं बन सकता है। उस संबंध में ट्रिब्यूनल ने तमिलनाडु राज्य और अन्य बनाम एस. सुब्रमण्यम, ([3]) के मामले में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया है। याचिकाकर्ता द्वारा उठाया गया एक और तर्क कि संविधान के अनुच्छेद 320 (3) (सी) के तहत प्रस्तुत यूपीएससी का जवाब उनके सामने रखा जाना चाहिए था, को भी खारिज कर दिया गया है।

(6) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री आर.एन.रैना ने हमारे सामने तीन दलीलें रखी हैं। उनकी पहली दलील यह है कि एक बार जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता को बरी करते हुए सभी पांच आरोपों पर निष्कर्ष दर्ज कर लिया, तो असहमतिपूर्ण राय दर्ज करने के लिए, अनुशासनात्मक प्राधिकारी उस समय 'नियम' के नियम 15 (2) की आवश्यकता का पालन करने के लिए कानूनी दायित्व के तहत था। विद्वान वकील के अनुसार, 2 अगस्त, 2000 (अनुलग्नक पी-7) का असहमति नोट बताया जाने वाला संचार, नियमों के नियम 15(2) की आवश्यकता को पूरा करने से बहुत दूर है। विद्वान वकील ने आगे तर्क दिया है कि 2 अगस्त, 2000 के आदेश को दर्ज करते समय कुछ विदेशी सामग्री को भी अनुशासनात्मक प्राधिकरण के विचार में लाया गया है, जिसे उप पैरा (vi) के तहत एक असहमति नोट माना जाता है, अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने कहा है कि अधिकारी वित्तीय मामलों में टीडीएम को सही सलाह देने में विफल रहे। विद्वान वकील के अनुसार यह आरोप पत्र का हिस्सा भी नहीं बनता है। श्री रैना ने इस बात पर भी जोर दिया है कि 'असहमति नोट' में जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए अच्छी तरह से आधारित निष्कर्षों से असहमति व्यक्त करते हुए निष्कर्ष को दर्ज करने के लिए किसी भी सबूत या कारण पर चर्चा नहीं की गई है। विद्वान वकील ने हमारा ध्यान 22 मार्च, 2002 के दंड आदेश (अनुलग्नक पी-2) और अनुशासनात्मक आदेश के पैरा 2 की ओर भी आकर्षित किया है, जिसमें तर्क दिया गया है कि इसमें फिर से कुछ विदेशी सामग्री शामिल की गई है जो याचिकाकर्ता के सामने कभी नहीं रखी गई थी।

(7) हालांकि, उत्तरदाताओं के विद्वान वकील श्री बृजेश्वर सिंह ने प्रस्तुत किया है कि नियमों के नियम 15(4) के तहत यूपीएससी द्वारा दी गई सलाह में विभिन्न कारकों को ध्यान में रखा गया है, जिसके कारण अनुशासनात्मक प्राधिकारी इस तक पहुंच सके हैं। 2 अगस्त, 2000 के असहमति नोट (अनुलग्नक पी-7) में निष्कर्ष दर्ज किया गया। विद्वान वकील ने यूपीएससी द्वारा दी गई सलाह के विभिन्न हिस्सों को यह तर्क देने के लिए पढ़ा है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ निष्कर्ष दर्ज करने के लिए अनुशासनात्मक प्राधिकरण के पास पर्याप्त सबूत थे। विद्वान वकील ने तोता राम बनाम भारत संघ और अन्य ([4]) के मामले में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया है, और तर्क दिया कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी के लिए असहमत होने की अपनी शक्तियों का प्रयोग करने में कोई रोक नहीं है। जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों के साथ कर्मचारी को जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों के विपरीत रिकॉर्ड करने के लिए दोषमुक्त कर दिया गया, जिसे हमेशा असहमति के क्रम में शामिल किया जा सकता है।

[2] 2001 AIR SCW 2450
[3] AIR 1996 C 1232.
[4] (2007) 14 S.C.C. 801.

(8) पक्षों के विद्वान वकील को सुनने और उनकी सक्षम सहायता से पेपर बुक का अध्ययन करने के बाद, हमें पहले नियम 15 का अध्ययन करना आवश्यक लगता है क्योंकि इसका विवाद से संबंधित संबंध है और इसे इस प्रकार पढ़ा जाता है:-

'' 15 जांच रिपोर्ट पर कार्रवाई

(1) अनुशासनात्मक प्राधिकारी, यदि वह स्वयं जांच प्राधिकारी नहीं है, तो उसके द्वारा लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से, मामले को आगे की जांच और रिपोर्ट के लिए जांच प्राधिकारी को भेज सकता है और जांच प्राधिकारी उसके बाद रोक लगाने के लिए आगे बढ़ेगा। जहां तक संभव हो नियम 14 के प्रावधानों के अनुसार आगे की जांच करें।

[(1 - ए) अनुशासनात्मक प्राधिकारी अग्रेषित करेगा या कराएगा

अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा की गई जांच की रिपोर्ट, यदि कोई हो, की एक प्रति भेजी जाए या जहां अनुशासनात्मक प्राधिकारी जांच प्राधिकारी नहीं है, तो जांच प्राधिकारी की रिपोर्ट की एक प्रति सरकारी कर्मचारी को भेजी जाए, जिसे प्रस्तुत करना आवश्यक होगा, यदि वह चाहे तो अपना लिखित अभ्यावेदन या पंद्रह दिनों के भीतर अनुशासनात्मक प्राधिकारी को प्रस्तुत कर सकता है, भले ही रिपोर्ट सरकारी कर्मचारी के अनुकूल हो या नहीं।

(1-बी) अनुशासनात्मक प्राधिकारी उप-नियम (2) से (4) में निर्दिष्ट तरीके से आगे बढ़ने से पहले सरकारी कर्मचारी द्वारा प्रस्तुत अभ्यावेदन, यदि कोई हो, पर विचार करेगा।]

(2) अनुशासनात्मक प्राधिकारी, यदि वह आरोप के किसी लेख पर जांच प्राधिकारी के निष्कर्षों से असहमत है, तो ऐसी असहमति के लिए अपने कारणों को रिकॉर्ड करेगा और यदि साक्ष्य रिकॉर्ड इस उद्देश्य के लिए पर्याप्त है, तो ऐसे आरोप पर अपने स्वयं के निष्कर्षों को रिकॉर्ड करेगा, (जोर) जोड़ा गया)

XX XX XX XX XX

(4) यदि अनुशासनात्मक प्राधिकारी सभी या किसी भी आरोप पर अपने निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए और जांच के दौरान पेश किए गए साक्ष्य के आधार पर यह राय रखता है कि

नियम 11 के खंड (v) से (ix) में निर्दिष्ट कोई भी दंड सरकारी कर्मचारी पर लगाया जाना चाहिए, यह ऐसा जुर्माना लगाने का आदेश देगा और सरकारी कर्मचारी को प्रतिनिधित्व करने का कोई अवसर देना आवश्यक नहीं होगा जुर्माना लगाने का प्रस्ताव:

बशर्ते कि प्रत्येक मामले में जहां आयोग से परामर्श करना आवश्यक हो, जांच का रिकॉर्ड अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा आयोग को उसकी सलाह के लिए भेजा जाएगा और उस पर ऐसा कोई जुर्माना लगाने का आदेश देने से पहले ऐसी सलाह पर विचार किया जाएगा। सरकारी नौकर।"

(9) उपरोक्त नियम का मात्र अवलोकन उस स्थिति में जांच रिपोर्ट पर की जाने वाली कार्रवाई पर विचार करता है जब अनुशासनात्मक प्राधिकारी स्वयं एक जांच प्राधिकारी नहीं है। नियम 15 के उप-नियम (1) के अनुसार, अनुशासनात्मक प्राधिकारी लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से मामले को आगे की जांच के लिए जांच प्राधिकारी को भेज सकता है और जांच प्राधिकारी प्रावधानों के अनुसार आगे की जांच करने के लिए आगे बढ़ने के लिए बाध्य है। नियम 14. हालाँकि, नियम 15 का उप-नियम (2) उस स्थिति से संबंधित है जब अनुशासनात्मक प्राधिकारी आरोप के लेखों पर जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होना पसंद करता है। ऐसी स्थिति में, अनुशासनात्मक प्राधिकारी का दायित्व है कि वह इस तरह की असहमति के लिए अपने कारण को रिकॉर्ड करे और फिर ऐसे आरोप पर अपने स्वयं के निष्कर्षों को रिकॉर्ड करे यदि रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य इस उद्देश्य के लिए 'पर्याप्त' है। नियम 15 का उप-नियम

(4) संघ लोक सेवा आयोग की सलाह लेने के लिए अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा जांच के रिकॉर्ड को अग्रेषित करके उसके साथ परामर्श करने पर विचार करता है। प्रभारी अधिकारी पर कोई जुर्माना लगाने का आदेश देने से पहले लोक सेवा आयोग द्वारा दी गई सलाह को ध्यान में रखा जाना आवश्यक है।

(10) 2 अगस्त, 2000 (अनुलग्नक पी-7) के संचार को देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि नियमों के नियम 15 के उप-नियम (2) की आवश्यक आवश्यकता का अनुपालन नहीं किया गया है। जांच प्राधिकारी के निष्कर्ष से असहमति के मामले में अनुशासनात्मक प्राधिकारी को असहमति के लिए अपना कारण दर्ज करना आवश्यक था और फिर रिकॉर्ड पर साक्ष्य इस उद्देश्य के लिए पर्याप्त होने पर ऐसे आरोप पर अपना निष्कर्ष दर्ज करना अनिवार्य था। अनुशासनात्मक प्राधिकारी पर डाला गया दायित्व अधिक भारी है क्योंकि रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य ऐसी किसी भी असहमति पर निष्कर्ष को बनाए रखने के लिए 'पर्याप्त' होना चाहिए, जिसे अनुशासनात्मक प्राधिकारी रिकॉर्ड करने के लिए आगे बढ़ सकता है। आमतौर पर आरोप को कायम रखने के लिए सबूतों की पर्याप्तता और अपर्याप्तता एक ऐसा प्रश्न होगा जिस पर विचार करने की आवश्यकता नहीं होगी, लेकिन नियम अनुशासनात्मक प्राधिकारी पर आरोप पर निष्कर्ष दर्ज करने का दायित्व डालता है, जहां वह केवल तभी असहमति व्यक्त करता है जब सबूत रिकॉर्ड पर हो। उस उद्देश्य के लिए 'पर्याप्त' है। ऐसा इस कारण से हो सकता है कि एक बार जांच प्राधिकारी ने एक या दूसरे निष्कर्ष पर निष्कर्ष निकाला है तो उन निष्कर्षों को उलटने के लिए उन निष्कर्षों को पलटने के लिए पर्याप्त सबूत आवश्यक होंगे। इसलिए, कमज़ोर सबूतों के आधार पर निष्कर्षों को उलटा नहीं किया जा सकता। असहमति के आदेश के अवलोकन से पता चलता है कि पैरा 1 में, आरोपों को पुन: प्रस्तुत किया गया है और आरोप संख्या (vi) निर्धारित किया गया है जिसे मूल आरोप-पत्र में भी शामिल नहीं किया गया था। पैरा 2 में, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने दर्ज किया है कि यदि याचिकाकर्ता जांच के दौरान प्रस्तुत साक्ष्यों के आधार पर जांच प्राधिकारी के निष्कर्षों के साथ प्रस्तावित असहमति के आलोक में जांच प्राधिकारी के निष्कर्षों के खिलाफ कोई अभ्यावेदन देना चाहता है, तो इसे लिखित रूप में प्रस्तुत करना आवश्यक है। ऐसा कोई सबूत नहीं है जिसे इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए चर्चा का हिस्सा बनाया गया हो कि असहमति के समर्थन में आरोप को बनाए रखने के लिए पर्याप्त सबूत हैं। यह मामला अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा विवेक का पूरी तरह से उपयोग न करने की एक निराशाजनक तस्वीर प्रस्तुत करता है। आरोपों को कायम रखने के लिए वस्तुतः कोई सबूत पर चर्चा नहीं की गई है और न ही इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कोई तर्क अपनाया गया है कि याचिकाकर्ता उन आरोपों का दोषी है। सुनवाई में, उत्तरदाताओं ने नियमों के नियम 15(4) के अनुसरण में अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा संघ लोक सेवा आयोग को दी गई सलाह का समर्थन किया है और उस आधार पर, प्रस्तुतियाँ दी गई हैं कि इसे अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा निष्कर्ष बनाए रखने के लिए पर्याप्त सबूत हैं।

(11) ट्रिब्यूनल द्वारा पारित आदेश संतोषजनक नहीं है। ट्रिब्यूनल ने खुद को यह पता लगाने के कानूनी मुद्दे पर समर्पित करने के बजाय कि नियमों के नियम 15 (2) का अनुपालन किया गया है या नहीं, इसने खुद को सामान्य प्रकृति के अप्रासंगिक मुद्दे पर गलत निर्देशित किया है, अर्थात्, यह अदालत नहीं बन सकता है अपील की और सबूतों की दोबारा सराहना करने में असमर्थ था। ट्रिब्यूनल पूर्वाग्रह के परीक्षण का हवाला देने के एक अन्य मुद्दे पर भी निर्भर है जो इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में बिल्कुल भी प्रासंगिक नहीं था। विचार के लिए एकमात्र मुद्दा यह था कि क्या नियम 15 के उप-नियम (2) के प्रावधानों का अनुपालन किया गया था या नहीं। उपरोक्त मुद्दे को छुआ गया है जबकि अन्य मुद्दों पर काफी समय दिया गया है, इसलिए, हम ट्रिब्यूनल द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को स्वीकार करने में असमर्थ हैं।

(12) जो प्रश्न हमारे समक्ष उठाया गया है, उस पर पंजाब नेशनल बैंक बनाम कुंज बिहारी मिश्रा, (5) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भी विचार किया है। उनके आधिपत्य द्वारा तैयार किया गया विशिष्ट प्रश्न इस प्रकार है:-

"जब जांच अधिकारी, अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान, इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि किसी अधिकारी के खिलाफ कदाचार के सभी या कुछ आरोप साबित नहीं हुए हैं, तो क्या अनुशासनात्मक प्राधिकारी इससे अलग हो सकता है और अपराधी अधिकारी को कोई अवसर दिए बिना विपरीत निष्कर्ष दे सकता है।"

(13) पंजाब नेशनल बैंक अधिकारी कर्मचारी (अनुशासन और अपील) विनियम, 1977 के विनियम 7(2) पर भरोसा करना, जो नियमों के नियम 15(2) के साथ-साथ संविधान पीठ के फैसले के बराबर है। प्रबंध निदेशक, ईसीआईएल बनाम बी. करुणाकर के मामले में प्रस्तुत, (6) पैरा 17 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार देखा है: -

"17 यदि जांच अधिकारी ने प्रतिकूल निष्कर्ष दिया था, तो करुणाकर के मामले के अनुसार [प्रबंध निदेशक, ईसीआईएल बनाम बी करुणाकर, (1993) 4 एससीसी 727] पहले चरण में कर्मचारी को अनुशासनात्मक प्रतिनिधित्व करने का अवसर दिया जाना आवश्यक था अधिकार, तब भी जब जांच अधिकारी द्वारा उन्हें पहले अवसर दिया गया था। यह उचित नहीं होगा कि जब अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा दोषी अधिकारियों के पक्ष में दिए गए फैसले को पलटने का प्रस्ताव हो तो कोई अवसर नहीं दिया जाना चाहिए। जांच का पहला चरण तब तक पूरा नहीं हुआ है जब तक अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने अपने निष्कर्ष दर्ज नहीं कर लिए हैं। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों की मांग है कि जो प्राधिकारी अपराधी अधिकारी के खिलाफ निर्णय लेने का प्रस्ताव करता है, उसे उसे सुनने का मौका देना चाहिए। जब जांच अधिकारी आरोपों को साबित कर देता है तो उस रिपोर्ट को दोषी अधिकारी को देना होता है जो अनुशासनात्मक प्राधिकारी के आगे की कार्रवाई करने से पहले एक अभ्यावेदन दे सकता है जो दोषी अधिकारी के लिए प्रतिकूल हो सकता है। जब, वर्तमान मामले की तरह, जांच रिपोर्ट अपराधी अधिकारी के पक्ष में है, लेकिन अनुशासनात्मक प्राधिकारी ऐसे निष्कर्षों से असहमत होने का प्रस्ताव करता है, तो उस प्राधिकारी को, जो अपराधी अधिकारी के खिलाफ निर्णय ले रहा है, अन्यथा उसे सुनवाई का अवसर देना चाहिए। उसकी अनसुनी निंदा की जाएगी। विभागीय कार्यवाही में अनुशासनात्मक प्राधिकारी का निष्कर्ष सबसे महत्वपूर्ण है।"

(14) निर्णय के पैरा 18 में यह माना गया है कि यदि अनुशासनात्मक प्राधिकारी जांच अधिकारी के दृष्टिकोण से भिन्न है और एक अलग निष्कर्ष पर आने का प्रस्ताव करता है तो प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किया जाना चाहिए। आगे यह देखा गया है कि यह सबसे अनुचित और अन्यायपूर्ण होगा जहां आरोपित अधिकारी जांच अधिकारी के सामने सफल हो जाते हैं, उन्हें अनुशासनात्मक प्राधिकारी के सामने प्रतिनिधित्व करने से वंचित कर दिया जाता है, इससे पहले कि प्राधिकारी जांच अधिकारी की रिपोर्ट से अलग हो और अपराध की खोज दर्ज करते समय, अधिकारी पर दंड लगाता है। पैरा 19 में यह बताया गया है कि विनियम 7(2) की भाषा में, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का पालन किया जाना चाहिए और निम्नानुसार पालन करने के लिए आगे बढ़ना चाहिए: -

'टी9. उपरोक्त चर्चा का परिणाम यह होगा कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को विनियम 7(2) में पढ़ा जाना चाहिए। इसके परिणामस्वरूप, जब भी अनुशासनात्मक प्राधिकारी किसी भी आरोप पर जांच प्राधिकारी से असहमत होता है, तो ऐसे आरोप पर अपने स्वयं के निष्कर्षों को दर्ज करने से पहले, उसे ऐसी असहमति के लिए अपने अस्थायी कारणों को दर्ज करना होगा और दोषी अधिकारी को पहले प्रतिनिधित्व करने का अवसर देना होगा। यह अपने निष्कर्षों को दर्ज करता है। जांच अधिकारी की रिपोर्ट जिसमें उसके निष्कर्ष शामिल हों, को अवगत कराना होगा और दोषी अधिकारी के पास अनुशासनात्मक प्राधिकारी को जांच अधिकारी के अनुकूल निष्कर्ष को स्वीकार करने के लिए राजी करने का अवसर होगा। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत, जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं, उस प्राधिकारी की आवश्यकता होती है, जिसे अंतिम निर्णय लेना होता है और जुर्माना लगा सकता है, ताकि अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा अपने निष्कर्षों को दर्ज करने से पहले कदाचार के आरोपी अधिकारी को एक प्रतिनिधित्व दायर करने का अवसर दिया जा सके। अधिकारी के खिलाफ लगाए गए आरोपों पर।" (महत्व जोड़ें)

(15) उपरोक्त दृष्टिकोण को एसबीआई बनाम अरविंद के. शुक्ला, (7) के मामले में भी अपनाया और लागू किया गया है। इसलिए, वैधानिक नियम, सिद्धांत और मिसाल पर कोई संदेह नहीं बचा है कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी को जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होने से पहले आरोपों को बनाए रखने के लिए सबूतों की पर्याप्तता को देखने के बाद कारण दर्ज करना चाहिए था। 2 अगस्त, 2000 (पी-7) को अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा दर्ज किया गया असहमति नोट नियमों की आवश्यक आवश्यकता को पूरा करने से बहुत दूर है। इसलिए, असहमति नोट के साथ-साथ उस पर आधारित बाद की कार्यवाही को रद्द किया जाना चाहिए।

(16) हमने असहमति नोट दर्ज करने के चरण से नए सिरे से आगे बढ़ने के उद्देश्य से मामले को अनुशासनात्मक प्राधिकारी को वापस भेज दिया होता। हालाँकि, विभिन्न कारणों से उपरोक्त पाठ्यक्रम को नहीं अपनाया गया है। उत्तरदाताओं के विद्वान वकील जांच अधिकारी की रिपोर्ट से यह दिखाने में सक्षम नहीं हैं कि याचिकाकर्ता को दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त सबूत हैं, जो उसके खिलाफ निष्कर्ष दर्ज करने का आधार बन सकते हैं। इसलिए मामले को इसी स्तर पर अंतिम रूप दे दिया जाए तो बेहतर है।

(17) उपरोक्त चर्चा की अगली कड़ी में, ट्रिब्यूनल द्वारा पारित आदेश दिनांक 12 मई, 2003 (अनुलग्नक पी-1) और साथ ही अनुशासनात्मक प्राधिकारी का आदेश दिनांक 22 मार्च, 2002 (अनुलग्नक पी-2) को रद्द कर दिया गया है। जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों को दोहराया जाता है और याचिकाकर्ता को आरोपों से मुक्त माना जाता है। परिणामस्वरूप, याचिकाकर्ता कानून के अनुसार पदोन्नति या उच्च वेतन के लिए अपने मामले पर विचार सहित सभी परिणामी लाभों का हकदार होगा।

भावना गेरा

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer)

कुरूक्षेत्र, हरियाणा